अङ्क-२६ वेदविद्या
जुलाई-दिसम्बर २०१५ ISSN-2230-8962

वेदज्ञान की प्रासङ्गिकता के शाश्वत प्रतिमान

डॉ. सीमा कंवर

मानव समाज को स्वाभाविक रुप से परमात्म प्रदत्त वेद रूपी ज्ञान प्राप्त हुआ जिसकी प्रासङ्गिकता को ऋषियों आचार्यों एवं मनीषियों ने शाश्वत माना है। सत्यविद्याओं का भण्डार अथवा सर्वज्ञानमयो हि सः अथवा वेदोऽखिल्लो धर्ममूलम् कहा गया है। वेदों में वर्णित विषय; जैसे - आयुर्वेद, धनुर्वेद, ज्योतिष सूर्य, चन्द्रमा आदि विषय भले ही विद्वानों को दृष्टिगोचर हो परन्तु विषम संख्याओं अथवा गणना विषयक बीज बिन्दु वेदों में प्रायः उल्लेखित है यथा -

एका च मे तिस्रश्च मे तिस्रश्च मे पञ्च च मे पञ्च च मे.....
..... त्रयस्त्रिंशच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम॥ १
चतस्रश्च मेऽष्टौ च मे ऽष्टौ च मे द्वादश च मे.....
ऽष्टाचत्वारि शच्च में यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ २

वेदों में देवपूजा, संगतीकरण, दान द्वारा सत्य और श्रद्धा, जगत् और धन, सर्वस्व और महिमा, क्रीड़ा और प्रमोद, उत्पन्न और उत्पद्यमान तथा सुवचन और सुकृत को जोड़ने का सन्देश सर्वजन हिताय उपलब्ध है -

सत्यं च में श्रद्धा च मे जगच्च मे धनं च मे
विश्वं च मे महश्च में क्रीडा च मे मोदश्च
मे जातं च मे जा - निष्यमाणं मे सुक्तं च मे सुकृतं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम॥ ३

अर्थात् जो मनुष्य विद्या का पठन पाठन, श्रवण और उपदेश करते व कराते हैं वे नित्य उन्नति को प्राप्त होते हैं। साथ ही वहाँ ऋत और अमृत, अयक्ष्म और अनामय, जीवन और दीर्घायुष्य, अनमित्रता और अभय, सुख और शयन एवं सुप्रभात और सुदिन में कारण - कार्यता दर्शाते हुए सम्मान, सहयोग और सहायता के द्वारा सार्थक करने का सन्देश दिया है, देखिए -

ऋतं च मेऽमृतं च मेऽयक्ष्मं च मेऽनामयच्च मे जीवातुश्च मे दीर्घायुत्वं च मेऽनमित्रं च मेऽभयं च मे सुखं च मे शयनं च मे सूषाश्च मे सुदिनं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥४

---

[१] यजुर्वेद १८/२४
[२] यजुर्वेद १८/२५
[३] यजुर्वेद १८/५
[४] यजुर्वेद १८/६

अर्थात् जो मनुष्य सत्य भाषणादि कामों को करते हैं वे सदा सुखी होते हैं। वहीं यह भी उद्धृत है कि जो शम, दम आदि गुणों से युक्त अच्छे-अच्छे नियमों का भली-भाँति पालन करने, वे अपने चाहे हुए कामों को सिद्ध करावे।[१]

दिशाएँ एवं कला के व्यावहारिक विभाजन के बीज भी हमें वेद से प्राप्त हुए हैं। वेदों में प्राची, दक्षिणा, प्रतीची, उदीची के रूप में दिशाओं का क्रम[२] तथा नक्षत्र, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु एवं सम्वत्सर का क्रम से उल्लेख हुआ है।[३] ज्ञेय वस्तु का प्रश्नोत्तर शैली में अभिधान देखना हो तो उदाहरण के रूप में यजुर्वेद के त्र्योविंशोध्यायः में ४५ से ४८ संख्या के मन्त्रों में देखा जा सकता है। वहाँ विद्वान् से प्रश्न किया गया है कि इस संसार में कौन अकेला चलता है और कौन फिर-फिर उत्पन्न होता है शीत की निवृत्ति कर्त्ता कौन और बड़ा उत्पत्ति का स्थान क्या है[४], इन सब प्रश्नों के उत्तरों को अगले मंत्र में कहते हैं कि हे विद्वानों! सूर्य अपनी ही परिधि में घूमाता है किसी लोकान्तर के चारों ओर नहीं घूमता। चन्द्रादि लोक उसी सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं।[५]

एतास्ते असौ धेनवः कामदुधा भवन्तु
एनीः श्येनीः सरूपा विरूपास्तिलवत्सा उप तिष्ठन्तु त्वात्र॥

अथर्ववेद के इस मंत्र में शरीर की नाड़ियों का वर्णन मिलता है। इस मंत्र में धेनु नाम से नाड़ियों का उल्लेख किया गया हैं। 'एनी', 'श्येनी', 'सरूपा' और 'विरूपा' नाम वाली ये चार प्रकार की धेनु या धमनियाँ हैं। इनमें अरुण रंग वाली वात-वाहिनी शिरायें 'एनी', श्वेत रंग वाली कफ वाहिनी 'श्येनी' रक्तवर्ण वाली रक्त-वाहिनी 'सरूपा' तथा नीले रंग वाली पित्तवाहिनी 'विरूपा' कहलाती है।[६] ईश्वरीय संदेश के रूप में राष्ट्र की समृद्धि का रहस्य निम्नलिखित मंत्र में द्रष्टव्य है -

अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम्।
तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूर्यावेशयन्तीम्॥७

भावार्थ - मैं सब जगत स्वामिनी हूँ, धन प्रदान करने वाली हूँ। राष्ट्र की रक्षा चाने वाले मुझ (राष्ट्रभाषा) को, जो उनकी प्रथम ज्ञानदा भी है, विशेष रूप से धारण करते हैं क्योंकि मैं वहाँ के प्रभूत ऐश्वर्य की स्थिति विधात्री हूँ एवं अप्राप्त ऐश्वर्य को प्रभूत रूप में वहाँ प्रवेश कराने वाली हूँ।

---

१ यन्ता च मे धता च मे ..... लयश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम। यजुर्वेद १८/६
२ प्राच्यै दिशे ..... स्वाहार्वाच्यै दिशेस्वाहा॥ यजुर्वेद २२/२४
३ नक्षत्रेभ्यः स्वाहा ..... स्वाहौषधीभ्यः स्वाहा॥ यजुर्वेद २२/२८
४ भाष्यकार महर्षि दयानन्द सरस्वती, यजुर्वेद २३/४५
५ भाष्यकार महर्षि दयानन्द सरस्वती, यजुर्वेद २३/४६
६ वेदमीमांसा, स्वामी विद्यानन्द सरस्वती, पृ. २४०
७ ऋग्वेद, १०/१२५/३

वेद तो ज्ञान के भण्डार हैं जिनके उचित अध्ययन के लिए मनुष्य यदि उनमें प्रवेश करे अवश्य ब्रह्मज्ञानी बन कर निकलेगा और स्वयं का तो उद्धार करेगा ही साथ ही में औरों का भी उद्धार करेगा। वेदों में विभिन्न कथाओं के माध्यम से ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, ब्रह्म, ईश्वर, प्रकृति पशु-पक्षी, मनुष्य की उत्पत्ति, प्रलय, समाज, काल, संस्कृत, ग्रह, नक्षत्र, राजा, प्रजा, स्वर्ग, नरक, यम, पाप-पुण्य, जीवन-मृत्यु आदि का विहंगम वर्णन किया गया है वेद 'गागर में सागर' की भाँति हैं।

"स्वस्ति पन्थामनु चरेम" [१] के रूप में भद्र परम्पराओं का निभाने का संकल्प हैं। इस मन्त्र का भावार्थ है - हे मनुष्यों! जैसे सूर्य और चन्द्रमा नियम से दिन-रात्रि चलते हैं वैसे न्याय के मार्ग को प्राप्त हो गए और सज्जनों के समागम करिये।

"अक्षैर्मा दीव्य, कृषिमित कृषस्व।"[२]

अर्थात् हे जुआरी! कभी भी जुआ नहीं खेलना, तू परिश्रम से खेती कर और उसी को बहुत मानता हुआ प्राप्त धन से आनन्दित रह इसी से गौएँ और स्त्री प्राप्त करोगे; साक्षात् सूर्य देव ने मुझसे ऐसा कहा है। इस मंत्र के रूप में वेदों में निषेधात्मक और विधेयात्मक आदेश है।

"अनुव्रतः पितुः पुत्रः।"[३]

अभिप्राय कि पुत्र पिता के अनुकूल कर्म करे और माता के साथ उत्तम मन से रहने वाला होवे। पत्नी पति से मधुर और शान्ति से युक्त भाषण करे। अतः इस मंत्र के रूप में दिशा निर्देश हैं। इसी तरह **"अभयं मित्रादभयं"** [४] के रूप में व्यक्ति की सनातन अपेक्षाएँ हैं। वहाँ कहा गया है कि मित्र से और शत्रु से हमें अभय हो, जाने हुए से अभय हो, जो आगे है उससे अभय हो, रात्रि में दिन में हमारे लिए अभय हो, सब दिशाएँ हमारी मित्र बनें। इसी तरह **"अग्ने नय सुपथा राये"** [५] के रूप में प्रार्थना की उदात्तता है। **"विश्वानि देव सवितर"** [६] के रूप में अच्छ से अच्छा बनने की चाह है। **"सर्वा आशा मम मित्रं भवतु"** [७] के रूप में स्नेहाकांक्षा है। और **"योऽस्मानं द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः"** [८] में ईश्वरीय न्याय-व्यवस्था में अटल विश्वास है।

अतः वेद विश्व की प्राचीनतम साहित्य निधि हैं। वेदों में कही सभी बातें शाश्वत प्रासंगिकता रखती हैं। जहाँ हमने कहा वैदिक विचारधारा तो इसका सीधा सम्बन्ध वेदों से है। वेद ही वैदिक विचारधारा का मूल स्त्रोत हैं। वेद ही भारतीयों के साहित्य, धर्म आदि के मूल-भूत आधार हैं। हमारी

---

१ ऋग्वेद, ५/५१/१५
२ ऋग्वेद, १०/३४/१३
३ अथर्ववेद, ३/३०/२
४ अथर्ववेद, १९/१५/६
५ यजुर्वेद ४०/१६
६ अथर्ववेद, १९/१५/६
७ अथर्ववेद, १९/१८/६
८ अथर्ववेद, ३/२७/१

भारतीय परम्परा वेदों को अपौरुषय मानती है वेद में मनुष्य के द्वारा की गई ईशस्तुतियाँ मंत्र कहलाती हैं।

वेदमंत्रों के बिना भारतीय संस्कृति की कल्पना ही नहीं की जा सकती। ये हमारी आस्था के केन्द्रबिन्दु, विपत्ति में सुरक्षा कवच, शत्रुओं को परास्त करने में अमोघ अस्त्र और आरोग्य प्रदान करने में संजीवनी सा कार्य करते हैं।

वैदिक विचारधारा अन्य विचारधाराओं की भाँति न तो देश विशेष से, न ही काल विशेष से और न ही व्यक्ति विशेष से जुडी हुई है, बल्कि यह विचारधारा तो सर्वाभौम, सार्वकालिक है। इसका आधार सत्य और लक्ष्य सर्वकल्याण है। यह उन मूल्यों का सृजन करती है जिनसे व्यक्ति, समाज व राष्ट्र का निर्माण होता है; यथा - **"ओं संगच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। देवा भागं यथा पूर्वे सं जानाना उपासते।"**[१] यह विचारधारा व्यक्ति को संस्कारवान बनाती है, सभी को एकता के सूत्र में बांधती हैं। संस्कारवान अर्थात् श्रेष्ठ सदाचारी व पवित्र मनुष्य। संस्कार या आचारहीन मनुष्य का कल्याण वेद नहीं करते **"आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः।" "कुर्वन्नेवेह कर्माणि" "जिजीविषेच्छतं समाः"**[२] अर्थात् कर्मों को करते हुए सौ वर्षों तक जीने की इच्छा करें। इस श्लोक के माध्यम से मनुष्य को पुरुषार्थ की प्रेरणा देते हुए यह विचारधारा कर्म सिद्धान्त व्यवस्था का प्रतिपादन करती है।

वैदिक विचारधारा एकांगी व एकपक्षीय न होकर सदैव सर्वांगीण व सर्वपक्षीय गुण धर्म वाली है। वैदिक विचारधारा के अनुसार मनुष्य का चरम लक्ष्य अलौकिक आनन्द की प्राप्ति है। परन्तु यह विचारधारा लौकिक सुखों की उपेक्षा नहीं करती, बल्कि उन्हें त्याग भाव से भोगने का उपदेश देती है -

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंचजगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भंजीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥३

वैदिक विचारधारा तो सदैव अस्तित्वती एवं चिरनूतन है। वेद के ही शब्दों में "न ममार न जीर्यति"[४] अर्थात् यह विचारधारा न कभी नष्ट होती है और न ही कभी पुरानी पडती है यही इस की सार्थकता व प्रासङ्गिकता को सिद्ध करती है।

वैदिक विचारधारा मनुष्य के लिए परम उपयोगी ज्ञान-विज्ञान के विविध विषयों का भी वर्णन करती है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने "ऋग्वेदादिभाष्य" भूमिका में ज्ञान-विज्ञान विषयों का वर्णन विस्तार से किया है। उनकी दृष्टि से मनुष्य का मनुष्य बनना ही सर्वाधिक महत्त्व की बात है। वैदिक

---

१ ऋग्वेद, १०/१९१/२
२ यजुर्वेद ४०/२
३ यजुर्वेद, ४०/१
४ अथर्ववेद १०/८/३२

विचारधारा मनुष्य को सच्चे अर्थों में मनुष्य बनने के लिए प्रेरित करती है। वहाँ स्पष्ट शब्दों में कहा गया है **"मनुर्भव"** १, अर्थात् मनुष्य बन। मनुष्य बनना सरल नहीं।

शान्ति का जितना व्यापक चिन्तन वैदिक विचारधारा में उपलब्ध है अन्य कहीं नहीं। शान्ति के व्यापक महत्त्व का प्रतिपादन **"औउम द्यौ शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः"**२ मन्त्र में करती है।

आज जबकि मनुष्य ने सुख-सम्पत्ति के पर्याप्त साधन या भण्डार अपने लिए जुटा लिए हैं, फिर भी वह दुःखी है, अशान्त है, उसका नैतिक व चारित्रिक पतन हो गया है। भौतिक सुख साधनों के आधार पर ही कोई बहुत दिनों तक टिका नहीं रह सकता। स्थायित्व के लिए अति आवश्यक है, उदात्त विचार, उज्वल चरित्र, सात्विक भाव व अध्यात्म से संबद्ध। वैदिक विचारधारा तो सर्वोत्तम विचारों की श्रेष्ठ वाहिका, त्याग-तप की साधिका, सन्तोष-धन व शान्ति भाव की प्रदायिका है।

आज की वर्तमान भौतिकवादी अथवा पाश्चात्यवादी स्थिति में वैदिक विचारधारा की मुख्य प्रासंगिकता के आधार है, वैदिक विचारधारा के पाँच स्तम्भ जिन्हें पतञ्जलि ने अपने योग दर्शन में सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह नाम से कहा है, इनकी प्रासंगिकता आज के युग में विशेष है। जीवन के प्रति वैदिक विचारधारा का समन्वयात्मक दृष्टिकोण अर्थात् भोग तथा त्याग का समन्वय आज के भौतिकवादी युग में विशेष रूप से विचारणीय एवं प्रासंगिक है।

वैदिक काल में गृहस्थी अतिथि सत्कार करना अपना कर्त्तव्य समझते थे एवं उनके लिए नैतिक आदर्श था कि "अतिथि के भोजन के पश्चात् गृहस्थी भोजन खावें।"३

समाज में अनुशासन एवं सुख शन्ति हेतु वर्ण-धर्म के सम्यक् पालन करने की प्रथा को मान्यता दी जाती थी। इस देश में ब्राह्मण विद्वान बने, क्षत्रिय वीर बने वैश्य देश का धन बढ़ावें, शूद्र सेवा करें और समाज में प्रत्येक अंग एक दूसरे को रुचिकर हो।४ वैदिक विचारधारानुसार जीवन में धन का अत्यधिक महत्त्व होते हुए भी उसके अर्जन एवं उपभोग के विषय में नैतिक आचरण को ही मान्यता दी गई है; यथा - "अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमत कृषस्व, वित्ते रमस्व बहुमन्यमानः"५ अर्थात् अक्षों से मत खेल, कृषि कर्म द्वारा उपार्जित धन में सन्तोष करता हुआ उस उपार्जित धन में रमण करें।

ऋग्वेद कालीन लोग श्रद्धापूर्वक कार्य करने में विश्वास रखते थे; यथा -

"श्रद्धयाग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः
श्रद्धा भगस्य मूर्धनि वचना वेदयामसि।"६

---

१ ऋग्वेद १०/५३/६
२ यजुर्वेद ३६/१७
३ अथर्ववेद ९/६/५-८
४ ऋग्वेद ८/३५/१६-१८
५ ऋग्वेद १०/३४/१३
६ ऋग्वेद १०/१५१/१

उस युग में प्राणी ईश्वर में बहुत आस्था रखते थे और कहते थे कि "वह ईश्वर हमारा पिता है, उत्पादक और मित्र है" १ तथा यजुर्वेद में भी ईश्वर को सर्वव्यापी मानते हुए कहा गया है - 'वह सर्वव्यापी अपनी प्रजा में ओतप्रोत है'।२

वैदिक विचारधारा के अनुसार यदि सोलह संस्कारों को पूर्ण रूप से किया जाए तो ऐसे मानव का, ऐसे समाज का, ऐसे राष्ट्र का निर्माण हो जाएगा जिसका हमेशा ही उत्थान होगा।

वैदिक विचारधारा विश्वशान्ति के कहे गए छः सूत्र - (१) सच्चाई से काम लेना, (२) ईश्वरीय अखण्ड नियमों का पालन करना, (३) समाज सेवा का व्रत लेना, (४) विलासिता में न पड़कर तपस्यामय जीवन व्यतीत करना, (५) विश्व का नियन्त्रण करने वाली दैवीय शक्ति में विश्वास, (६) दूसरों की भलाई में निज स्वार्थ का उत्सर्ग विशेष रूप से आज के वर्तमान समय में प्रासंगिक है। यदि इन सूत्रों पर चला जाए तो समस्त समस्याओं का समाधान स्वयं ही हो जाएगा।

पर इस मुख्य विचार के साथ-साथ अनेक विचार जो संहिताओं में व्यक्त किए गए हैं वे भी आज के युग के लिए उपयोगी हैं। और मानव जाति के विकासक्रम के सोपान भी हैं। जैसे यमयमी सूक्त का "पापमहुर्यः स्वसारं निगच्छात्" दान सूक्त का "केवलाघी भवति केवलादि" अथवा "न सखा यो न ददाति सख्ये" अथवा "एतेशमीमिः सुशमी अभूवन्" ३ अर्थात् ये ऋषि श्रम के द्वारा सत्कर्मी हुए। दोषों के परिहार सम्बन्धी विचार भी आज के लिए उपयोगी है; यथा-

"उलूकयातुं शुशुलूकयातं जहि श्वयातुमुत कोकयातुम्।
सूपर्णयातुमुत गृध्रयातुं दृषदेव प्र मृण रक्ष इन्द्र॥"४

अर्थात् उल्लू जैसा बर्ताव और भेडिए जैसा आचरण छोड़ों (अज्ञान और हिंसा छोडों) कुत्ते और चकवे (स्वजाति द्वेष और काम) जैसा आचरण छोड़ो। गरुड़ और गिद्ध का आचरण (अभिमान और लोभ) को छोड़ो। वेद सुखकरी औषधितत्त्वों से युक्त३५ वायुमण्डल के लिए वृक्ष वनस्पतियों के लगाने के लिए उपदेश करने के साथ-साथ "शम सन्त यज्ञ" ६ कहकर यज्ञ हवन द्वारा वायुमण्डल के निर्माण के लिए नुस्खे भी बताता है। यजुर्वेद ३/१ में भेषज वायु से युक्त पर्यावरण परिशोधक यज्ञ हेतु उपदेश किया गया है कि यज्ञीय वृक्षों की समिधाओं की अग्नि को घृत हवियों से प्रचण्ड करके उसमें हविर्द्रव्यों की आहुतियाँ प्रदान करें।७

---

१ अथर्ववेद ११/१/३
२ यजुर्वेद ३८/८
३ ऋग्वेद, १०/३७१०; १०/११७/४; १०/२८/२२
४ अथर्ववेद, ८/४/२२; ऋग्वेद, ७/१०४/२२
५ ऋग्वेद शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु
६ ऋग्वेद, ७/३५/९
७ वाज सं - ३/१ समिधाग्निं दुवस्यत घृतैबोधयतातिथिम। अस्मिन हव्या जुहोतन

इस प्रकार अग्नि के माध्यम से यज्ञीय आहुतियों की गन्ध एवं धूम्र से वायुमण्डल तैयार होता है जिससे पर्यावरण शुद्ध होकर जीवनप्रद वायु प्राप्त होती है।[१] अतः प्रदूषण शोधन और पर्यावरण-संरक्षण में स्थूल (कर्मकाण्डीय) एवं सूक्ष्म (आधिदैविक) दोनों दृष्टियों से वैदिक यज्ञ उत्तम साधन है जो वैदिक ग्रन्थों में उपलब्ध है। अतः यहाँ तो वैदिक विचारधारा के कुछ उदाहरण ही उद्धृत किए गए हैं अन्य अनेक विचार उदाहरण के रूप में संहिताओं में हैं जो आधुनिक युग के लिए प्रासंगिक हैं।

उपरोक्त विवरण से पूर्णतः सिद्ध हो जाता है कि आज के युग में वैदिक विचारधारा की मुख्य प्रासङ्गिकता है। यही एक विचारधारा है जो मनुष्य को मनुष्य से, धर्म को धर्म से, राष्ट्र को राष्ट्र से जोड़े हुए हैं। नहीं तो आज जिस वर्तमान समय अर्थात् भौतिकवादी, पाश्चात्यवादी समय से गुजर रहे हैं वहाँ हमारी संस्कृति का अस्तित्व भी दिखाई न देता। वैदिक विचारधारा ही हमें एक सूत्र में बांधे हुए है तथा वसुधैव कुटुम्बकम्, परोपकाराय सतां विभूतयः, यज्ञो वै श्रेष्ठतम कर्म, सत्यं ब्रयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्, स्वाध्यान्मा प्रमदः, धर्मान्न प्रमदितव्यम् भूत्यै न प्रमदितव्यम् आदि का उपदेश देती है एवं आज राष्ट्र को, मानवता को, धर्म को इस वैदिक विचारधारा की प्रासंगिकता के महत्त्व का आभास होता है। वैदिक विचारधारा का आज के लिए ही नहीं बल्कि सभी कालों के लिए भी उन विचारों का महत्त्व बना रहेगा और अर्थ, काम के चक्र से त्रस्त मानव वैदिक विचारधारा की पावन मंदाकिनी में अवगाहन पाकर ही चिरशान्ति का अनुभव कर सकता है निश्चय ही मानव के लिए वेदज्ञान वेदविद्याओं एवं सिद्धानों की सर्वमालीन प्रासङ्गिकता शाश्वत है, जिसमें कभी भी का अवरोधक नहीं रहा है।

डॉ. सीमा कंवर
अध्यक्ष संस्कृत विभाग
एम.सी.एम. डी.ए.वी. कॉलेज,
पञ्जाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़
मकान न. 1498/2, सेक्टर 43-B,
चण्डीगढ़ 160022

[१] ऋग्वेद, १०/१८६१ । बात आ वातु भेषजं शुंभ मयोभु नो हृदे प्रण आयूषि तारिषत्